हाथी और ड्रैगन ने खोजा संवाद का रास्ता

अतुल चंद्र

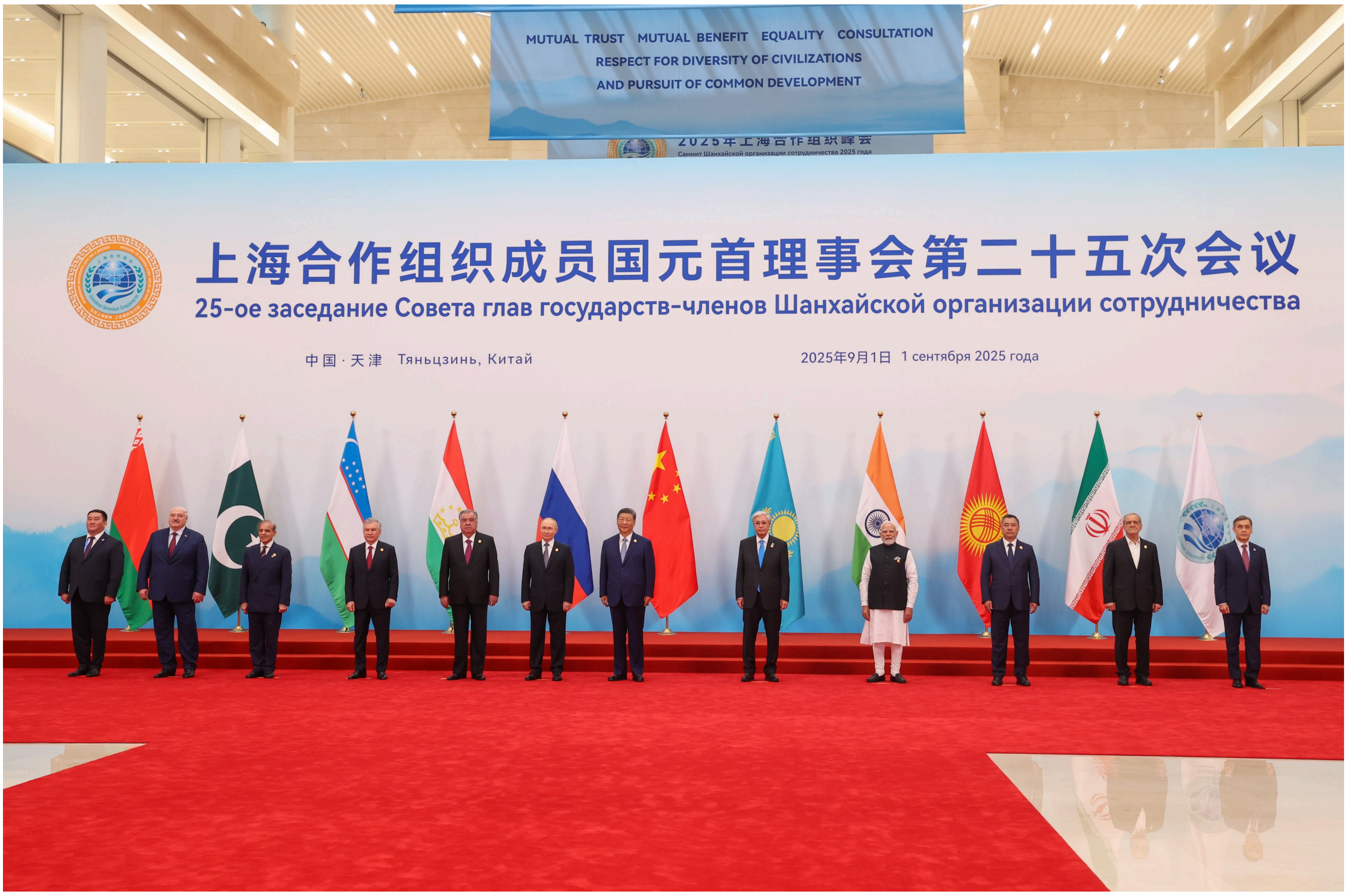

तियानजिन में एससीओ शिखर सम्मेलन में।फोटो : नरेंद्र मोदी / X

एक सितंबर 2025 को तियानजिन में हुए शंघाई सहयोग संगठन (SCO) शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग की मुलाक़ात हुई। दोनों नेताओं ने 'प्रतिद्वंद्वी नहीं, साझेदार' की भावना को आधार बनाते हुए आपसी रिश्तों की रूपरेखा पेश की। उनके बयानों में साफ़ दिखा कि वे मतभेदों को बातचीत के ज़रिए सुलझाना चाहते हैं और विकास के लिए मिलकर काम करने का इरादा रखते हैं। यह 2020 के लद्दाख संकट के बाद रिश्तों में आई सबसे बड़ी नरमी है।

इस नई शुरुआत को मज़बूती देने के लिए सिर्फ़ बातें ही नहीं हुईं, बल्कि दो अहम क़दम भी उठाए गए। पहला, भारत और चीन ने 19 अगस्त 2025 को नई दिल्ली में सीमा के मुद्दे पर विशेष प्रतिनिधियों (SR) के बीच बातचीत को दोबारा शुरू किया। दूसरा, दोनों देशों ने पाँच साल बाद सीधी उड़ानें शुरू करने और लोगों के आपसी संपर्क व व्यापारिक रिश्तों को

बढ़ाने पर सहमति जताई। इन क़दमों से आपसी संवाद के रास्ते खुले हैं, जिससे ग़लतफ़हमियाँ कम होंगी और रिश्तों में फिर से भरोसा लौटेगा।

इस नई शुरुआत की झलक तब मिली, जब शी जिनपिंग ने तियानजिन शिखर सम्मेलन में ग्लोबल दक्षिण का एजेंडा आगे बढ़ाने पर ज़ोर दिया। इसमें SCO विकास बैंक को शुरू करने की बात भी शामिल थी। उनका संदेश साफ़ था—अब दुनिया सिर्फ़ एक ताक़त के दबाव या प्रतिबंधों से नहीं चलेगी। भारत के लिए, जो हमेशा से रणनीतिक स्वायत्तता चाहता है, SCO के अंदर भारत-चीन संवाद तंत्र का बनना आत्मसमर्पण नहीं बल्कि लाभ का एक अवसर है।

2020 में गलवान की झड़प के बाद भारत ने चीन पर तकनीक और निवेश से जुड़ी कड़ी शर्तें लगाईं। दोनों देशों ने सीमा पर और सैनिक भेजे और सामान्य राजनीतिक संपर्क बंद हो गया। लेकिन 2024 के अंत तक, कार्य-स्तर की बैठकों (WMCC) और कूटनीतिक बातचीत से धीरे-धीरे कुछ प्रगति हुई। अक्टूबर 2024 में गश्त और पीछे हटने को लेकर एक समझौते ने पूर्वी लद्दाख के कुछ हिस्सों में तनाव कम किया। इन क़दमों और डोभाल-वांग की बातचीत ने 2025 में बड़े नेताओं की मुलाक़ात का रास्ता बनाया।

हालाँकि इसे लेकर बहुत लहालोट होने की ज़रूरत नहीं है। कई समस्याएँ अभी ज्यों की त्यों बनी हुई हैं – 99.2 अरब डॉलर का व्यापार घाटा, वास्तविक नियंत्रण रेखा (LAC) की अलग-अलग समझ, तिब्बत की जल परियोजनाओं पर चिंता और तीसरे देशों से जुड़ी दिक़्क़तें। लेकिन अब हालात ऐसे नहीं हैं कि टकराव ही एकमात्र रास्ता हो। तियानजिन में दोनों देशों ने तय किया कि सीमा को संभालेंगे, पर उसे पूरे रिश्ते पर हावी नहीं होने देंगे। साथ ही, वे आर्थिक रिश्तों को भी आगे बढ़ाएँगे, जैसे उड़ानें, वीज़ा और धार्मिक यात्राएँ। यह 2020–22 के गतिरोध से एक नया और व्यावहारिक मोड़ है।

ग्लोबल दक्षिण के लिए समन्वय का मंच

अब SCO केवल एक सुरक्षा क्लब नहीं रह गया है। बीजिंग के आँकड़ों के अनुसार, 2024 में चीन–SCO व्यापार 512.4 अरब डॉलर तक पहुँच गया। यह समूह अब दुनिया की लगभग आधी आबादी और करीब एक-चौथाई वैश्विक जीडीपी का प्रतिनिधित्व करता है, जिसे नज़रअंदाज़ करना असंभव है। प्रस्तावित SCO विकास बैंक बुनियादी ढाँचे को जोड़ने के लिए एक ऐसा साधन होगा, जो आईएमएफ/एडीबी जैसी शर्तों से बंधा नहीं होगा और ब्रिक्स न्यू डेवलपमेंट बैंक का पूरक बन सकता है, यानी वही बहुध्रुवीय वित्तीय व्यवस्था जिसकी माँग ग्लोबल दक्षिण लंबे समय से करता आया है।

भारत के लिए यह केवल प्रतीकात्मक महत्व नहीं रखता। दक्षिण एशिया का आपसी व्यापार हमेशा से बहुत कम रहा है। पूर्वी उपमहाद्वीप (भारत–नेपाल–बांग्लादेश) और हिमालयी गलियारों में रेल, ऊर्जा और सीमा-पार व्यापार के लिए क्षेत्रीय पूँजी उपलब्ध होने से भारतीय उद्योगपतियों और किसानों, दोनों की उत्पादकता बढ़ सकती है। SCO का मंच नई दिल्ली और बीजिंग के लिए छोटे लेकिन अहम सीमा-पार प्रोजेक्ट्स में सह-निवेश करना आसान बनाता है, ऐसे प्रोजेक्ट्स जो सप्लाई चेन को सुरक्षित बनाते हैं, लेकिन हर सड़क को सुरक्षा के नज़रिये से देखने की मजबूरी नहीं पैदा करते।

इन सब के पीछे एक ख़ास संदर्भ है। वॉशिंगटन ने हाल ही में भारत से आयातित ज़्यादातर सामान पर 50% टैरिफ लगा दिया। यह क़दम भारत द्वारा रूस से सस्ता तेल ख़रीदने के जवाब में उठाया गया। यह फ़ैसला तियानजिन शिखर सम्मेलन से कुछ ही दिन पहले आया। इसके साथ ही अमेरिका की बयानबाज़ी भी उलझी हुई रही, कभी धमकी, कभी दावा कि भारत शून्य टैरिफ तक जा सकता है। यह सब एक परिचित साम्राज्यवादी सोच को दिखाता है कि साझेदार अमेरिका की रणनीति के मुताबिक चलें, भले ही उनकी अर्थव्यवस्था को नुक़सान क्यों न हो, उनकी नीतिगत स्वायत्तता को झटका क्यों न लगे।

नई दिल्ली के नज़रिये से देखें तो यह सहयोग नहीं, बल्कि दबाव जैसा लगता है। भारत और अमेरिका बातचीत जारी रखेंगे, जैसा कि वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल ने कहा है। लेकिन यह टैरिफ़ प्रकरण एक बड़ा सबक़ सिखाता है : संतुलन बनाए रखने में ही समझदारी है, और किसी एक ब्लॉक, चाहे पश्चिमी हो या कोई और, पर ज़्यादा निर्भरता भारत की

औद्योगिक नीति को बाहरी दबावों के लिए खुला छोड़ देती है। एससीओ/ब्रिक्स भारत को मोल-भाव की वह ताक़त देते हैं, जो उसे एक छोटे साझेदार की भूमिका में कभी नहीं मिल सकती।

विकास के नज़रिये से देखें तो भारत–चीन सहयोग कोई विचारधारा का प्रयोग नहीं बल्कि विकास की रणनीति है। इसके लिए तीन ठोस रास्ते सामने आते हैं:

1. **औद्योगिक सुधार :** भारत को इलेक्ट्रॉनिक्स, ईवी (Electric Vehicles) और कैपिटल गुड्स में वैल्यू चेन में ऊपर जाने के लिए सिर्फ़ हल्की असेंबली (asset-light assembly) पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। अगर चुने हुए क्षेत्रों में चीन का प्रत्यक्ष निवेश और तकनीकी साझेदारी स्थानीय कंटेंट और मानकों के साथ जोड़ी जाए, तो घरेलू सप्लायर इकोसिस्टम को तेज़ी से विकसित किया जा सकता है। यही वह वैल्यू-एडिशन की चुनौती है, जिसमें भारत उत्पादन-आधारित प्रोत्साहन योजना (PLI) के तहत संघर्ष करता रहा है। व्यवहारिक सहयोग, न कि पूरी तरह से प्रतिबंध, ने ही पूर्वी एशिया की विनिर्माण वृद्धि को सफल बनाया। (यह नीति का तर्क है; तियानजिन की सकारात्मक स्थिति इसे लागू करना राजनीतिक रूप से आसान बनाती है।)
2. **व्यापार सुविधा और लॉजिस्टिक्स :** अगर एससीओ (SCO) की मदद से कनेक्टिविटी फाइनेंस मिले तो सीमा पर व्यापार के रास्ते खुल सकते हैं, कृषि सुरक्षा नियम एक जैसे हो सकते हैं और बंगाल की खाड़ी से हिमालय तक माल ढुलाई का समय घट सकता है। इससे भारतीय छोटे-मझोले कारोबारों (MSME) को फायदा होगा और चीनी निर्यातकों को भी मदद मिलेगी।

3. **ज्ञान और लोगों का आदान-प्रदान :** सीधी उड़ानों और आसान वीज़ा नियमों से विश्वविद्यालयों, शोधार्थियों-विशेषज्ञों और कारोबारी संपर्कों को नया जीवन मिलेगा, जो नवाचार (AI, बायोटेक, ग्रीन टेक्नोलॉजी) को बढ़ावा देंगे। कई सालों की आपसी आलोचना और अनदेखी के बाद, इस तरह का संरचित संपर्क सबसे सस्ता और कारगर विश्वास बढ़ाने का तरीक़ा है।

मतभेदों को संभालना, उन्हें नकारना नहीं

वास्तविक नियंत्रण रेखा अब भी संवेदनशील मुद्दा है। इसी वजह से ज़रूरी है कि अतिरिक्त संवाद चैनल – जैसे कोर-कमांडर वार्ता, WMCC और विशेष प्रतिनिधि (SR) स्तर की बातचीत – नियमित रूप से चलती रहें और मीडिया की राजनीति से अलग रहें। अक्टूबर 2024 की गश्त और पीछे हटने पर हुई समझ ने सीमा विवाद को "सुलझाया" तो नहीं, लेकिन यह ज़रूर दिखाया कि अगर राजनीतिक नेता बातचीत जारी रखें, तो चरणबद्ध तकनीकी समाधान संभव हैं। तियानजिन बैठक ने दोबारा यह बात साबित की कि सीमा से जुड़े मुद्दों के आधार पर पूरे रिश्ते को परिभाषित नहीं करना चाहिए।

व्यापार के मुद्दे पर, ख़बरों के अनुसार मोदी ने व्यापार घाटा कम करने और बाज़ार तक पहुँच बढ़ाने पर ज़ोर दिया; वहीं शी ने कारोबार को "सुरक्षा का मुद्दा" बनाने से बचने और विकास पर ध्यान देने की बात की। दोनों देशों को सब कुछ तो नहीं मिलेगा, लेकिन अब दोनों मानते हैं कि नियंत्रित आपसी निर्भरता उस नाज़ुक अलगाव से बेहतर है, जो विकास और नौकरियों को नुकसान पहुँचाता है।

तियानजिन SCO बैठक का समापन 3 सितंबर को बीजिंग में चीन की 80वीं वर्षगांठ की एंटी-फासिस्ट स्मृति समारोह के साथ हुआ, जिसमें कई विश्व नेता शामिल हुए। चाहे कोई बीजिंग की ऐतिहासिक कहानी को कैसे भी देखे, पर इसका प्रतीकात्मक संदेश स्पष्ट है: क्षेत्रीय सुरक्षा को क्षेत्रीय ही रहना चाहिए, और एशिया अब एजेंडा तय करने का काम ट्रांस-अटलांटिक गठबंधनों को नहीं सौंपेगा। डॉनल्ड ट्रंप इस समारोह में शामिल नहीं हुए, जबकि पहले इसकी अटकलें लगाई जा रही थीं। यह इस बात को और मज़बूत करता है कि यूरेशिया का सहयोग अब अपने ही समय और तरीक़े से आगे बढ़ रहा है।

भारत के लिए शांति का स्पष्ट लाभ अंदरूनी स्तर पर होगा: सरकारी ख़र्च में राहत, औद्योगिक नीति को सहारा, और कृषि संकट, शहरी रोज़गार और जलवायु अनुकूलन जैसे मुद्दों पर ध्यान देने की गुंजाइश बनेगी। चीन के लिए यह लाभ

बाहरी है : पड़ोस को लेकर सुरक्षा से निश्चिंतता, जिससे वह उच्च गुणवत्ता वाली वृद्धि और तकनीकी लक्ष्यों पर ध्यान दे सकेगा।

दक्षिण एशिया के लिए, भारत–चीन प्रतिद्वंद्विता में कमी का मतलब है नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका और पाकिस्तान पर दबाव कम होना, और व्यापार-आधारित ग़रीबी उन्मूलन के लिए नए अवसर खुलना। यही वह तरीका है जिससे वैश्विक दक्षिण का बहुपक्षीयता (multilateralism) नारे के बजाय वास्तविक रूप लेता है—सस्ते ऋण, तेज़ लॉजिस्टिक्स और पारदर्शी नियमों के माध्यम से।

भारतीय और अंतरराष्ट्रीय मीडिया अक्सर "चीनी ख़तरा" जैसे डराने वाले ढाँचे और "नई शुरुआत" जैसी सकारात्मक सुर्ख़ियों के बीच झूलता रहता है। एक वर्ग-चेतन (class-conscious) नज़र इन दोनों से बचती है। यह समझती है कि कैसे सीमा-आधारित राष्ट्रवाद का इस्तेमाल देश के भीतर असमानता के मुद्दों को छिपाने के लिए किया जा सकता है ; और यह भी देखती है कि कैसे कॉरपोरेट मीडिया प्रबंधन पश्चिमी बातों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर सकता है, जिससे भारत को सुरक्षा-केंद्रित गठबंधनों की ओर धकेला जाता है—ऐसे गठबंधन जो औद्योगिक मज़बूती के ख़िलाफ़ जाते हैं।
इस नज़रिये से, बीजिंग के साथ संवाद कोई भावुकता नहीं है ; यह भारतीय मज़दूरों और उत्पादकों के लिए मोल-भाव की ताक़त है।

व्यवहार में रणनीतिक स्वायत्तता

तियानजिन से प्रतिस्पर्धा खत्म नहीं हुई है। बस उसे अनुशासित किया गया है। भारत अपनी सप्लाई चेन को आधुनिक और विविध बनाएगा और बाज़ार तक पहुँच के लिए दबाव बनाएगा। चीन अपने बुनियादी हितों और पड़ोसी देशों के साथ संबंधों की रक्षा करेगा। लेकिन ढाँचे में बंधी प्रतिस्पर्धा और बेतरतीब दुश्मनी में, केवल पहली स्थिति ही शांति, स्थिरता और विकास को संभव बनाती है।

अमेरिका का टैरिफ झटका यह याद दिलाता है कि किसी के साथ गठजोड़ करना सुरक्षा की गारंटी नहीं है। SCO/BRICS का रास्ता—संभावित SCO बैंक, फिर से शुरू हुआ सीमा व्यापार और हवाई संपर्क—भारत और चीन को यह अवसर देता है कि वे अपने-अपने राष्ट्रीय हितों का ध्यान रखते हुए आपसी संबंधों में भरोसेमंदी और स्थिरता लाएँ। यही असली बहुपक्षीयता है, सिर्फ़ दिखावटी गुटनिरपेक्षता नहीं।

पुरानी कहावत को नए ढंग से कहें तो, हाथी के लिए ड्रैगन के साथ उन नियमों पर नाचना (सावधानी रखते हुए) जिन्हें बनाने में हाथी मदद करे—किसी और के ऑर्केस्ट्रा में जूनियर पार्टनर बनने से बेहतर है। तियानजिन शिखर सम्मेलन और मोदी–शी मुलाक़ात ने ऐसे रास्ते फिर से खोले हैं, जो सीमा पर तनाव कम कर सकते हैं, व्यापारिक प्रवाह को दोबारा शुरू कर सकते हैं और बहुध्रुवीय संस्थानों को मज़बूत कर सकते हैं, जिनकी ग्लोबल दक्षिण दशकों से माँग कर रहा है। आगे का काम यह है कि इन सुर्ख़ियों को ठोस नीति में बदला जाए : समयबद्ध SR बैठकें, पारदर्शी विमानन और वीज़ा टाइमलाइन, SCO बैंकिंग पर ठोस कार्ययोजना, और व्यापार व निवेश पर ऐसा रोडमैप जो भारतीय वैल्यू-एडिशन बढ़ाए और रिश्तों को सामान्य बनाए।

शांति भावुकता से नहीं, बल्कि योजनाबद्ध तरीके से आती है। हाथी और ड्रैगन आखिरकार मिलकर इसकी योजना बनाने पर सहमत हो गए हैं।

(अतुल चंद्र ट्राइकंटिनेंटल : इंस्टीट्यूट फॉर सोशल रिसर्च में एक शोधकर्ता हैं। उनके रुचि के क्षेत्रों में एशिया में भू-राजनीति, इस क्षेत्र में वामपंथी और प्रगतिशील आंदोलन, और ग्लोबल साउथ में संघर्ष शामिल हैं।)